मानवाधिकार आन्दोलन, कितना मानवीय, कितना व्यवसाय?

बजरंगलाल

दुनिया में अपने समर्थको की संख्या विस्तार के तीन मार्ग प्रचलित हैं ;1. तर्क, 2. प्रेम 3. शक्ति। हिन्दू धर्म ने सदा विचार मंथन और शास्त्रार्थ को आधार बनाया। ईसाई धर्म ने तर्क से हटकर सेवा और सदभाव का सहारा लिया। इन दोनो के विपरीत इस्लाम ने संगठन शक्ति को ही महत्व दिया। तर्क विचार परिवर्तन का आधार है और सेवा सदभाव हृदय परिवर्तन का। संगठन शक्ति हमेशा इन दोनो से हटकर अपनत्व को ओर ले जाया करती है, जहॉ न्याय की हत्या करके अपनत्व को प्रोत्साहित किया जाता ह।

इस्लाम एक गुट है जो समाज के शष लोगो पर अपना वर्चस्व स्थापित करने को धर्म मानता है। इसकी एक सव तंत्र विचार धारा भी है और जीवन पद्धति भी। बचपन से ही इस्लाम अपने अनुयायियों को धर्म के नाम पर उक्त विचार धारा और जीवन पद्धति के लिए तैयार करता है। हिन्दू जहॉ बचपन से ही न्याय का पाठ पढाता है। वही इस्लाम अपने बच्चो को अपनत्व सिखाता है। हिन्दू व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण को मानता है और इस्लाम संगठन से मिलने वाली ताकत को धर्म मानता है। दोनो की विचार धारा और जीवन पद्धति का समाज पर दो भिन्न प्रभाव पडता रहा। असंगठित हिन्दू संगठित इस्लाम के समक्ष कमजोर पडा और धीरे – धीरे संगठित भारत में भी अपने पैर फैलाने लगा।

इस्लाम की इस संगठन शक्ति की प्रतिक्रिया हुई और हिन्दुओं के भी एक गुट ने इस्लामिक कार्य प्रणाली के आधार पर इस्लाम से टकराव के लिए एक गुट बनाना शुरू किया जिसे संघ और बाद में कई गुट बनने पर संघ परिवार नाम दिया गया। इन लोगों ने भी तर्क के स्थान पर संगठन को महत्व दिया तथा धर्म और सत्ता का उसी तरह घालमेल किया जैसे इस्लाम संगठन को बनाना शुरू किया। इस्लाम को उसी की कार्य प्रणाली से एक चुनौती मिली।

इसी समय भारत में धर्म के स्थान पर राष्टोय स्वतंत्रता की प्राथमिकता का नारा बुलन्द हुआ तथा गांधी और सुभाष के रूप में दो विचार धाराओं में बंटकर देश आजादी के प्रयास करने लगा। इस्लाम से भी अनेक लोग धर्म की अपेक्षा आजादी को अधिक महत्व देते हुए इस आंदोलन मे कूद पडे। संघ परिवार से इन आंदोलन में कूदने वालो की संख्या अपेक्षाकृत कम रही। स्वतंत्रता आन्दोलन ने जोर पकडा और जब स्वतंत्रता नजदीक दिखने लगी तो इस्लाम और संघ परिवार धर्म के आधार पर स्वतंत्रता का लाभ उठाने को सक्रिय हो गए। गांधी जी ने भरसक प्रयास किया कि इन दोनो को इस तथा कथित धार्मिक टकराव से रोक लें किन्तु विफल रहे। सच्चे अर्थो मे गांधी जी हिन्दू थे जो हिन्दू विचार धारा और जीवन पद्धति के आधार पर इस्लामिक जीवन पद्धति और विचार धारा का शमन करना चाहते थे किन्तु इस्लामिक विचार धारा की विजय हुई और भारत का विभाजन हो गया। इस्लामिक मुसलमानों ने गांधी जी की छाती पर चढकर पाकिस्तान ले लिया और इस्लामिक हिन्दुओ ने गांधी की छाती पर पिस्तौल की गोलियॉ दाग दी। इस तरह भारत मे साम्प्रदायिकता ने कटटरवादी इस्लाम और कटटरवादी संघ परिवार के बीच बंटकर एक शान्ति प्रिय धर्म निरपेक्ष, भारतीय विचार धारा को मजबूत होने के पूर्व ही समाप्त कर दिया।

यह सच है कि हिन्दू कभी सांम्प्रदायिक हो ही नहीं सकता। वह कर्तव्य के प्रति कटटर हो सकता है, ईश्वर के प्रति कटटर हो सकता है, न्याय के प्रति भी कटटर हो सकता है किन्तु वह न तो संगठनके प्रति कटटर हो सकता ह न ही संख्या विस्तार के प्रति इस्लाम की कटटरता तथा एक पक्षीय संख्या वृद्धि की प्रतिक्रिया स्वरूप कुछ हिन्दुओ ने अपनी भारतीय विचारधारा को छोडकर संघ परिवार के रूप मे एक नई प्रणाली की शुरूआत की। इसी विचारधारा का अतिवादी स्वरूप हमें तब देखने को मिला जब एक कायर और उन्प्रत्त नवयुवक ने गांधी की हत्या कर दी। गांधी हत्या किसी संगठन या किसी व्यक्ति का कार्य नहीं था, न ही यह मुसलमानों की क्रिया के विरूद्ध प्रतिक्रिया थी। यह तो पूरी तरह उस विचारधारा क परिणाम स्वरूप की जाने वाली क्रिया थी जो विचारधारा मुसलमानों की क्रिया की प्रतिक्रिया स्वरूप भारत में लगातार पांव पसार रही थी। संघ परिवार की इस विचारधारा के विरूद्ध गांधी वादियों में प्रतिक्रिया स्वाभाविक थी। यह प्रतिक्रिया हुई भी किन्तु वह न हिंसक हुई न ही कटटर। सिर्फ संघ परिवार के विरूद्ध गांधिवादियो के मन मे घृणा और अविश्वास बना रहा। इस प्रतिक्रिया का लाभ उठाया सत्ता संघर्स से जुडे एक गुट ने, जिन्होने अपनी गिरती हुई साख को बचाने में इसका भरपूर उपयोग किया। धडाधड नये–नये संगठन खडे होने लगें जो प्रत्यक्ष रूप से धर्म निरपेक्ष और मानवाधिकार संरक्षण आदि शब्दों का प्रयोग करते रहे किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से वे इस्लामिक ध्रुव के पक्ष मे रहे। जबसे दुनिया मे प्जीवाद और साम्यवाद के बीच का शीतयुद्ध समाप्त हुआ है तबसे अमेरिका विरोध का प्रत्यक्ष झंडा उठाने का दायित्व मुसिल्म कटटरवाद ने उठा लिया है। अनेक कटटरपंथी साम्यवादी पूॅजीवादी का नया विकल्प खडा करने के स्थान पर पूॅजीवाद के विरूद्ध गुरिल्ला विचार युध्द में परिवर्तित हुए और स्वाभाविक ही था कि शत्रु के शत्रु मित्र बन जावें। देश के अनेक संगठनो का पूॅजीवाद विरोध उचित भी था और स्वाभाविक भी। किन्तु पूॅजीवाद विरोध के उददेश्य के लिए इस्लामिक साम्प्रदायिकता का समर्थन बिल्कुल उचित नहीं था। और वह भी धर्मनिरपेक्षता या मानवाधिकार संगठन का मुखौटा लगाकर करना तो और भी निन्दनीय है। यह तो वैसा ही हुआ जैसे कोई गृहस्थ अपनी पारिवारिक इच्छा पूर्ति करते हुए भी साधु वेश धारण करे या संघ परिवार राष्टवाद और भारतीय संस्कृति के नाम पर साम्प्रदायिक घृणा फैसला रहें। किन्तु हुआ कुछ वैसा ही। दुनिया जानती है कि इस्लामिक विचारधारा से उत्प्रेरित कई धर्मान्धों ने आर्य समाज के कई दिग्गजो की हत्या की। स्वतत्रता के बाद भी उक्त धर्मान्धता शान्त नही हुई। इस विचारधारा से परित लोग आज भी भारत में अनेक बेगुनाह विपरीत धर्मियों पर आक्रमण करते हैं और कर रहे हैं किन्तु मानवाधिकार संगठन कभी इस्लामिक विचारधारा को उक्त कटटरवाद के लिए दोषी नही मानतें । गुजरात में भासन की सहायता से दंगें हुए। संघ परिवार की विचारधारा के परिणाम थे। इन दंगो का चरित्र और परिणाम निश्चय ही अमानवीय था। सारे देश के आम हिन्दुओं ने भी उक्त कार्य को अनुचित माना। किन्तु उसी गुजरात सरकार ने बडो बहादुरी से आंध्र में जाकर राष्ट विरोधी कटटरवादी चार मुस्लिम युवको को मार गिराया जिसमें इशरत जहां भी शामिल थी। इन तथा कथित मानवाधिकार प्रेमियों न गुजरात सरकार ने इस कार्य की प्रशंसा क्यों नही को? उल्टे उन्होने इशरत जहॉ के गुनहगार प्रमाणित होते तक के चार दिनो तक गुजरात सरकार की गंभोर आलोचना जारी रखी। क्या वे इशरत जहॉ के निर्दोष सिद्ध होते तक के कुछ प्रमाणित होते तक के कुछ निर्दोष सिद्ध होते तक के कुछ दिनों तक धैर्य नहीं रख सकते थे। क्यों उन्होने इतनी जल्दबाजी दिखाकर अपने को बेनकाब किया। अभी इसी माह गुजरात सरकार ने लश्करे तोयबा के एक कथित आतंकवादी को आंध्र मे गिरफतार करने की बहादुरी की तो वहॉ के कुछ मुसलमानों ने खुला विरोध किया जिसमें एक युवक मारा गया। फिर से मानवाधिकार संगठनों नें कभी यह प्रश्न क्यों नहीं उठाया कि ऐसे आतंकवादी आंध्र में ही क्यों छिप रहे है और आंध्र की निकम्मी सरकार क्या कर रही है? क्यों आंध्र के मुसलमानो का एक वर्ग ऐसे आतंकवादीयों से सहानुभूति रखता है ? भारत में गांधी हत्या के दोषी नाथूराम गोडसे के प्रति सहानुभुति रखने वालों को जितना साम्प्रदायिक माना जाता है, इस्लामिक आतंकवादियों से सहानुभुति रखने वाले भी पूरी तरह उन्ही के समान साम्प्रदायिक हैं। किन्तु हमारे भारत के तथा कथित धर्म निरपेक्ष और मानवतावादी बिल्कुल दुहरा मापदण्ड अपनात है। गुजरात सरकार के विरूद्ध बोलने में उनका गला फाडकर चिल्लाते हैं किन्तु मुसलमाना के विरूद्ध बोलने मे उनका गला बैठ जाता है। आपको यदि पक्षपात ही करना है तो मानवाधिकार संगठन और धर्मनिरपेक्ष शब्द को तो कलंकित न करें। रेडक्रास का बिल्ला लगाकर युद्ध भूमि में शत्रु पक्ष की हत्या करना पहले भी निन्दनीय है।

गोधरा मे घटना हुई। मुस्लिम भीड ने कार सेवकों के डब्ब पर हमला किया। आग लगी और संतावन यात्री जलकर मर गये। गुजरात में स्वाभाविक प्रतिक्रिया हुई। संघ परिवार ने उसका लाभ उठाया। गुजरात सरकार क इशारे पर बडी संख्या मे निर्दोष मुसलमान मारे गये। किसी सरकार की सहायता से कत्लेआम का होना एक अनोखी और शर्मनाक घटना थी। सारे देश के आम लोगो ने दोनो घटनाओ का विरोध किया। इतना अन्तर अवश्य था कि देश भर के हिन्दू गुजरात दंगो को गोधरा की प्रतिक्रिया मानते थे जबकि देश भर के मुसलमान गोधरा की घटना को संघ परिवार के अत्याचारो की प्रतिक्रिया। इतना फर्क स्वभाविक भी था। किन्तु इस सम्पूर्ण घटनाक्रम में तथाकथित धर्मनिरपेक्षों ने तथा मानवाधिकार संगठनों ने तो एक तरह से मुस्लिम कटटरवाद की चापलूसी का ठेका ही उठा लिया। गोधरा की सच्चाई दो साम्प्रदायिक संगठनो की चालाकी पूर्ण

प्रतिस्पर्धा में कभी सामने नहीं आ सकी जिसमें एक का नेतृत्व मोदी जी के हाथो में था और दूसरी का मानवाधिकार संगठनों के हाथ में। मोदी सरकार ने एक पक्ष बनकर गुजरात हत्याकांड के अपराधियों कों बचाने में पहल की और मानवाधिकार संगठनो ने उन्हें फंसाने में। यदि य संगठन गोधरा घटना के दोषियों के विरूद्ध आधी भी सक्रियता रखते तो उन पर उंगली नहीं उठती। किन्तु ये तो पूरी तरह एक पक्ष बनकर हत्याकांड के विरूद्ध एक पक्षीय सक्रियता दिखाने लगे। जाहिरा शेख के बयान का इन्होने भरपूर उपयोग किया। सारी न्यायिक परंपराए तुडवाकर इस मुददे को उछाला गया। भारत के पूर्व सर्वोच्य न्यायाधीश गण तक इस मानवीय कार्य से जुड गयें। सारे भारत में प्रतिदिन कई–कई ऐसी जघन्य घटनाएँ घटित हो रही हैं जिसमें जघन्य हत्या तक के आरोपियों को उसी मृतक की पत्नी या बच्चे न्यायालय में भय और सिर्फ भय से पहचानने स इन्कार कर देते है। कोई भी मानवाधिकारी यदि आंख खोल कर आवे तो म कम से कम दस ऐसे अघोशित साक्षात्कार तो तुरन्त करा सकता हूँ। किन्तु इस समस्या की जड में जाने तथा समाधान खोजने की अपेक्षा बुरी नियत से इस घटना विशेष को उछाला गया और परिणाम सबके सामने है। जाहिरा शेख फिर पलट गई। साम्प्रदायिक शक्तियों का मनोबल उँचा हुआ। अब मानवाधिकार के पैरवीकार कि मुँह से कहेगे कि जाहिरा अविश्वसनीय है, झूठी है। यद्धपि वे भी वे सब तर्क देंगे जो अन्य साम्प्रदायिक शक्तियॉ अब तक निर्लज्जता से देती हैं। भारत के छदम धर्म निरपेक्षों और मानवाधिकारियों का चेहरा बेनकाब हुआ है।

कानून और न्यायालय चाहे कुछ भी कहे किन्तु भारत का बच्चा–बच्चा इस बात पर विश्वास करता है कि जाहिरा आज जो कह रही है वह सत्य नहीं है। हो सकता ह कि वह सच ही हो किन्तु हमें विश्वास नहीं होता। मानवाधिकार कार्यकर्ता धोखा खा गये। किन्तु साथ ही भारत का बच्चा–बच्चा महसूस करता है कि गोधरा रेल दुर्घटना में लगातार सत्य को छुपाया जा रहा है। सत्य इस्लामिक विचारधारा से पैदा हुई साम्प्रदायिकता के निकट है। भले ही वह आग कार सेवकों ने ही क्यो न लगाई हो अथवा कार सेवको ने ही उक्त डब्बे पर हमला क्यो न किया हो। कानूनो सच चाहे जो हो तथा वास्तविकता भी चाहे जो हो किन्तु जनमानस में इस सम्बन्ध में अलग तरह का सच छाया हुआ है जिसमें गोधरा में मानवाधिकार संगठन धूत पक्षकार के रूप मे तथा जाहिरा शेख के मामले में दया के पात्र दिखते हैं कुल मिलाकर भारत के हम जैसे हजारो धर्म निरपेक्षों और मानवाधिकार प्रेमियो का सर न मोदी के मुख्य मंत्रित्व से झुका और नही अब्दुला बुखारी की साम्प्रदायिकता से। हमारा तो वास्तव में सर झुका हे हमारे नाम पर काम कर रहे तथा कथित धर्म निरपेक्षो और मानवतावादियों से जो जानबूझकर या अन्जाने मे साम्प्रदायिक संगठनो के एक पक्ष के साथ खडे होकर अपनी विश्वनीयता कम करते जा रहे है।

---

2 वर्तमान अव्यवस्था का एकमात्र विकल्प, व्यवस्था परिवर्तन

व्यक्ति और समाज एक दूसरे के पूरक होते है। व्यक्ति समाज निर्माण में महत्वपूर्ण होता है और समाज भी व्यक्ति के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाता है। दूसरे शब्दो में हम कह सकतें है कि व्यक्ति समूह ही मिलकर समाज व्यवस्था का निर्माण करतें हैं और समाज व्यवस्था ही व्यक्ति का चरित्र निर्माण करती है। व्यवस्था और चरित्र एक दूसरे के पूरक हैं। दोनो एक दूसरे को मजबूत करते हैं।

समाज के व्यवस्थित संचालन में व्यक्ति चरित्र की बहुत बडी भूमिका है। यदि सामान्य नागरिक का चरित्र ही ठीक नहीं है ता व्यवस्था ठीक हो ही नहीं सकती। व्यक्ति के चरित्र के ती प्रभाव होते हैं ;(1)व्यक्तिगत। ;(2)समाज पर अप्रत्यक्ष प्रभाव डालने वाले। (3) अपराधिक। व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण में व्यवस्था की न कोई भूमिका रही है न होनी चाहिए। यह कार्य सिर्फ धर्म प्रमुखों का होता है जो अपने उपदेशो से चरित्र निर्माण किया करते है। समाज पर अप्रत्यक्ष प्रभाव डालने वाले आचरण में धर्म प्रमुखों के उपदेशो का भी महत्व होता है और व्यवस्था के नियम कानूनो का भी। किन्तु व्यक्ति के अपराधिक चरित्र पर नियंत्रण का एकमात्र दायित्व का ही होता है।

इसमें धर्म प्रमुख का सामाजिक संस्थाओं का दायित्व या तो शून्य होता है या नगण्य। यदि व्यक्ति के चरित्र में कोई आपराधिक गिरावट आती है तो वह व्यवस्था की विफलता के ही लक्षण और परिणाम है। किन्तु इस निष्कार्ष के साथ साथ यह बात भी उतनी है सच है कि व्यक्ति का गिरता चरित्र ही व्यवस्था विफलता का कारण है। व्यवस्था का निर्माण भी व्यक्ति ही करता है तथा कार्यान्वयन भी। यदि आम नागरिक के चरित्र का ही पतन हुआ तो न व्यवस्था ठीक होगी न ही कार्यान्वयन। व्यक्ति के चरित्र निर्माण के लिये एक अच्छी और मजबूत व्यवस्था आवश्यक है और एक अच्छी और मजबूत व्यवस्था के लिये आम नागरिको के चरित्र का स्तर भी अच्छा होना आवश्यक है। न चरित्र के अभाव में व्यवस्था में सुधार हो सकता है न व्यवस्था में सुधार हुए बिना चरित्र में सुधार हो सकता है। दोनो ही एक दूसरे पर पूरी तरह निभर है।

वर्तमान समय में आम नागरिक चरित्र में तेजी से गिरावट आई तथा आती जा रही है। अपराधिक चरित्र का ग्राफ भी तेजी से बढा है। आपराधिक चरित्र की गिरावट का एकमात्र कारण है असफल व्यवस्था। यदि व्यवस्था ठीक होती तो आम नागरिक चरित्र में सुधार संभव था किन्तु जब व्यवस्था में ही आपराधियों की घुसपैठ हो चुकी हो तब चरित्र निर्माण बिल्कुल असंभव है। वर्तमान व्यवस्था में लगभग निन्यान्नवे प्रतिशत भ्रष्टाचार है तथा करीब सोलह प्रतिशत अपराधिक चरित्र का समावेश है। अपराधिक चरित्र का प्रतिशत लगातार बढ रहा है। यदि व्यवस्था में पांच प्रतिशत तक आपराधिक चरित्र हो तब तक व्यवस्था से चरित्र निर्माण की कुछ उम्मीद संभव है किन्तु यदि यह मात्रा पांच प्रतिशत से अधिक हो जाये तो व्यवस्था चरित्र निर्माण के विपरीत चरित्र पतन की सहायक हो जाती है। वर्तमान समय मे समाज के आम नागरिक चरित्र मे भ्रष्टाचार निन्यानवे प्रतिशत तक तथा आपराधिक चरित्र पूरे भारत का औसत दो प्रतिशत है। व्यवस्था के गिरते चरित्र के परिणाम स्वरूप आम नागरिक चरित्र में यह आपराधिक चरित्र का औसत लगातार बढ ही रहा है।

चूँकि व्यवस्था में किसी तरह के सुधार के लिये आम नागरिको के अपराधिक चरित्र मे सुधार अनिवार्य है तथा आम नागरिको के अपराधिक चरित्र में सुधार के लिये एक साफ सुथरी व्यवस्था भी अनिवार्य है अतः जो लोग बिना व्यवस्था में सुधार किये चरित्र निर्माण के पक्षधर है वे पूरी तरह भ्रम में है। गायत्री परिवार, आर्य समाज, आशा राम बापू तथा रामदेव जी सरीखे सैकडो सन्त या संस्थाएँ पूरी ताकत से चरित्र निर्माण में लगी हैं किन्तु आपराधिक चरित्र में गिरावट बढती ही जा रही है, क्योकि ये प्रयत्न व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण सुधार तक सीमित है, आपराधिक आचरण के लिये ये प्रभाव शुन्य हैं। अतः इस चरित्र निर्माण प्रणाली से किसी भी रूप में चरित्र पतन के रूकने की प्रतीक्षा करना व्यर्थ है। इसी तरह सर्वोदय, वामपंथी दल, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ आदि लगातार पचपन वर्षो से वर्तमान व्यवस्था के सुधार मे लगे हैं किन्तु व्यवस्था लगातार बिगडती ही जा रही है, इन संस्थाओं के चरित्र में भी लगातार गिरावट आ रही है क्योंकि आम नागरिक के चरित्र मे गिरावट हो और व्यवस्था सुधरने लगे यह असंभव है। कहॉ से लायेंगे आप अच्छे लोग? यदि समाज मे भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, आर्थिक असमानता तथा श्रमशाषण में कमी नहीं हुई तो आप चाहे कितना भी प्रयत्न करें किन्तु आप व्यवस्था मे कोई सुधार नहीं कर सकतें। आखिरकार समाज के ही चुने हुए लोगों को आगे आकर व्यवस्था बनानी है और समाज के ही व्यक्तियों को ऐसे लोगो का चुनाव करना है। यदि चुनने वाला ही चरित्र पतन का शिकार है तो व्यवस्था का कोई सुधार हो ही नहीं सकता।

प्रश्न उठता है कि चरित्र व्यवस्था से सुधरेगा और व्यवस्था चरित्र से और भारत मे अभी दोनो का संकट है। चरित्र पतन से व्यवस्था बिगड रही है और व्यवस्था बिगडने से चरित्र गिर रहा है तो आखिर हमारे पास मार्ग क्या है? मेरे विचार मे हमारे पास इसका एक ही मार्ग है ''व्यवस्था परिवर्तन''। भारत की वर्तमान व्यवस्था पूरी तरह दायित्व केन्द्रित है। व्यक्ति के व्यक्तिगत आचरण मे परिवर्तन या सुधार का दायित्व व्यवस्था ने स्वीकार किया हुआ है। अब हमें विकेन्द्रित दायित्व तथा हस्तक्षेप न्यूनतम करके सभी दायित्व परिवार, ग्राम, जिला, प्रदेश को दे दिये जायें। शासन

व्यक्ति के अपराधिक चरित्र सुधार तक स्वयं को सीमित कर लें। गांधी जी इस संबंध में पूरी तरह स्पष्ट थे। उन्हाने यह कभी नही सोचा था कि स्वतंत्र भारत मे ग्राम स्वराज्य का पूरा अर्थ ही उलट दिया जायेगा। उनका सीधा–सीधा कथन था कि नीचे से नीचे वाली इकाई की भी अपनी स्वतंत्र न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका होनी चाहिये। यह व्यवस्था भारतीय संविधान करे। हमारे लोग गांवो मे जाकर नशामुक्ति, अन्त्योदय, ग्राम स्वावलम्बन, स्वः रोजगार आदि की दिशा दें। शासन ने तो गांवो को निर्णय का अधिकार दिया ही नही किन्तु हमारे गांधीवादी मित्र नशामुक्ति, अन्त्योदय और ग्राम स्वावलम्बन मं लग गये। गांधीवादी संस्थाओं के लोग भी जब ग्राम स्वराज्य सम्मेलना में अन्त्योदय, जैविक खेती, नशामुक्ति और स्वावलम्बन की योजनाओं पर चर्चा करते हुए दिखते है तो मुझे लगता है कि हमने जीवित गांधी की बात तो सुनी नही, मृत गांधी की बात को गांठ बांध कर पचपन वर्षो से व्यवस्था परिवर्तन में लगे हैं।

ज्ञान तत्व अंक – 86

ग पूँजीवाद, साम्यवाद और श्रमवाद

दुनिया में तीन प्रकार के आदमी होते हैं – 1 श्रम प्रधान, 2 बुद्धि प्रधान, 3 धन प्रधान। श्रम प्रधान व्यक्ति के पास आय का सिर्फ एक ही श्रोत होता है शारीरिक श्रम। शारीरिक श्रम से आय की अधिकतम सीमा भी कम होती है। अप्रशिक्षित श्रमिक चाहे कितना भी मजबूत क्यों न हो उसे एक सौ रूपए दैनिक से अधिक मिलना बिल्कुल असंभव है। वहीं बुद्धि का मूल्य श्रम की अपेक्षा में कई गुना अधिक होता है। क्योंकि बुद्धिजीवी के पास श्रम भी होता है और बुद्धि भी। इस तरह उसके पास आय के दो श्रोत है – धन। आय के मामले में धन एक अतिरिक्त श्रोत बन जाता है। धनवान व्यक्ति के पास आय के तीन साधन उपलब्ध होते हैं– श्रम, बुद्धि और धन। यह तीनों मिलकर धनवान की आय को क्षमता में और भी अधिक वृद्धि करते रहते है।

बहुत प्राचीनकाल में जब जन्म से वर्ण व्यवस्था न होकर कर्मानुसार थी तब श्रमजीविया की समाज में क्या स्थिति थी यह पता नहीं। अवश्य हीं व्यवस्था में उनके सामान्य भरण–पोशण के प्राक्धान रहे होंगे। किन्तु जब से बुद्धिजीवियों ने जन्म से जाति आंकलन की व्यवस्था की और सभी सम्मान के पद अपने लिए आरक्षित कर लिए तब से श्रमजीवियों का एक हीं वर्ग बनने लगा और उनके साथ स्वाभविक और निश्चित रूप स अन्याय होने लगा। योग्यता के स्थान पर कुछ जातियां ही श्रमजीवी मान ली गई। भले ही उनके किसी सदस्य की बौद्धिक क्षमता कितनी ही अधिक क्यों न हों। पश्चिम के देशों में पूँजीवादी व्यवस्था श्रम शोषण का आधार थी और भारत में वर्ण व्यवस्था। मार्क्स ने पूँजीवाद के विरूद्ध समाज को एकजुट कर श्रम मूल्य बढाने की योजना दी और भारत मे वर्ण व्यवस्था के विरूद्ध जातीय आरक्षण लागू कर दलितात्थान की योजना बनी। मार्क्स के बाद जब यह विचार आगे बढा तो वहॉ भी श्रमजीवियो में शामिल गरीब बुद्धिजीवियों ने उक्त पूँजीवाद विरोध का नेतृत्व किया और भारत में भी दलित बुद्धिजीवियो ने हीं वर्ण व्यवस्था के विरोध का नेतृत्व किया। फलः स्वरूप गंगा शिव की जटा में आकर उलझ गई आर्थात क्रांति का लाभ या तो बुद्धिजीवियों तक पहुंच सका या दलित बुद्धिजीवियों के पास। वह लाभ कभी भी श्रमजीवियों के पास नहीं पहुंच सका।

श्रम जीवियों के पास भले ही उक्त क्रांति का लाभ न पहुंचा हो किन्तु पूंजीवाद को इससे परेशानी तो हुई। पूंजीवाद ने इस परेशानी से बचने के लिए कृत्रिम उर्जा की सहायता ली। श्रम अभाव वाले देश में तो कृत्रिम उर्जा का अधिक उपयोग उनकी मजबूरी थी किन्तु श्रम बहुल देशों ने कृत्रिम उर्जा का उपयोग श्रम शोषण के लिए किया। भारत पूरी तरह श्रम बहुल देश है। भारत में कृत्रिम उर्जा को श्रम प्रतिस्पर्धी के रूप में स्थापित होना चाहिए था। किन्तु पूंजीपतियों के षडयंत्र के अन्तर्गत कृत्रिम उर्जा को श्रम सहायक के रूप मं घोषित कर दिया गया। मैं आज तक नहीं समझ सका कि कृत्रिम उर्जा श्रम सहायक कैसे हो सकती है? किन्तु भारत ने वह कर दिखाया और स्वतंत्रता से लेकर आज तक कृत्रिम उर्जा श्रम सहायक के रूप में घोषित और पोषित है। श्रम उत्पादित अनेक वस्तुओं पर कर लगाकर कृत्रिम उर्जा को सब्सीडी दी जाती है। दूसरी ओर श्रमिक उपभोक्ता वस्तुओं यथा साइकिल, कपडा, दवा, खाद्यतेल आदि पर भी कर लगाकर रसोई गैस तथा मिटटी तेल आदि पर सब्सीडी दी जाती है। पूँजीपतियों के इस षडयंत्र के साथ बुद्धिजीवियों ने भी आरक्षण क नाम पर श्रमजीवियों साथ पृथक षडयंत्र शुरू किया। इन्होने दलित व आदिवासियों के जातीय उत्थान के नाम पर अनेंक बौद्धिक कार्यो में आरक्षण कर लिया। भारत के कुछ आदिवासियों तथा हरिजनों में पूँजीपति नगण्य, बुद्धिप्रधान पांच से सात प्रतिशत तथा श्रम प्रधान नब्बे से पनचानवे प्रतिशत तक है। जबकि सवर्णो में इसके ठीक विपरीत स्थिति है। दलित आदिवासियों आरक्षण से तीन चार प्रतिशत बुद्धिजीवी दलित आदिवासी आगे बढे और यह एक पृथक वर्ग बन गया। श्रमजीवी आदिवासी दलित इस लाभ से बिल्कुल अछूते ही रहे। इन आरक्षित अनारक्षित बुद्धिजीवियों ने नौकरियों में इतने सारे लाभदायक आकर्षक लाभ प्राप्त कर लिए कि बुद्धि और श्रम के बीच एक लम्बी दोवार खडी हो गई। आरक्षण बुद्धिजीवी दलितों पिछडो के लिए वरदान बन गया और श्रमजीवी दलित आदिवासी अपनों से भी ठगा गए।

भारत में श्रम शोषण करने के लिए बुद्धिजीवियों का नेतृत्व सम्भाला वामपंथियों ने और धन पतियों का नेतृत्व संभाला दक्षिण पंथियों ने। वामपंथियों ने शोषण के दो सूत्र खडे किए – 1. शिक्षित बेरोजगारो दूर करने का प्रयत्न, 2. न्यूनतम श्रम मूल्य की शासकीय घोषणा। यह पूरी तरह प्रमाणित है कि बेरेजगारी का सीधा संबंध श्रम से है। यदि श्रम को रोजगार मिला तो शिक्षित बेरोजगार हो ही नहीं सकता। क्योकि शिक्षित के पास रोजगार के लिए श्रम है ही, शिक्षा तो उसे अतिरिक्त साधन के रूप में उपलब्ध है। शिक्षित को हम सात प्रतिशत रोजगार भले ही दे दें किन्तु उसका रत्तीभर लाभ श्रम प्रधन बेरोजगारो को नहीं हो सकता क्योकि शिक्षा का संबंध बुद्धि से अधिक है, श्रम से कम। इसी तरह न्युनतम श्रम मूल्य की घोषणा भी षडयंत्र ही रही। दो प्रकार के श्रम मूल्य बने, 1. कृत्रिम और, 2. वास्तविक। कृत्रिम श्रम मूल्य वृद्धि रोकने में सहायक। मैं आश्वस्त हूँ कि यदि न्यूनतम शासकीय श्रम मूल्य को कम कर दिया जाय या समाप्त कर दिया जावे तो वास्तविक श्रम मूल्य बढ जायगा। किन्तु ऐसा होगा नहीं क्योकि बुद्धिजीवियों के प्रतिनिधि श्रमजीवियों का मुखौटा लगाकर वैसी योजना बनने या बनवाने का षडयंत्र करते है। वामपंथियों और दक्षिण पंथियो के बीच अनेक मुददो पर टकराव है। किन्तु श्रम शोषण के तीन सिद्धान्तों पर दोनो एकमत है। यदि रसोई गैस का दाम बढता है तो दोनो संयुक्त रूप से आसमान सर पर उठा लेते है। किन्तु साईकिल पर टैक्स लगता है तो सब चुप रहतें है। इन लोगो ने अनजान श्रमजीवियो तक को तो समझा दिया कि रसोई गैस तो आपके उपयोग की वस्तु है। वे क्यों नहीं बताते कि साइकिल पर 250 रूपए टैक्स लगाने का प्रभाव क्या आम आदमी पर नही होगा। अभी पिछले दिनो हीं प्रस्तुत केन्द्रीय बजट में लगाये गये करों के कारण साइकिल के मूल्य मे 25 रूपये की और वृद्धि हुई है।

इसी तरह जातीय आरक्षण का भी वामपंथी समर्थन करते है। इसमें भी इनकी दक्षिणपंथी बुद्धिजीवियों से मिली भगत है। क्योंकि आरक्षण का कोई भी लाभ श्रमजीवियों को मिल हीं नहीं सकता। इसलिये ये दोनो फिर मिलकर आरक्षित पदों का मूल्य और महत्व बढावाते जाते है। और आरक्षण का लाभ ले रहे आरक्षित बुद्धिजीवी इनकी जय बोलते रहते है। यहॉ भी बेचारा श्रम ठगा का ठगा रह जाता है।

मेरी जानकारी के अनुसार मार्क्स ने ऐसा कभी नहीं सोचा था कि उसकी नीति उसी के नाम पर श्रम शोषण का हथियार बनेगी और उसका उपयोग सत्ता प्राप्ति के प्रयत्न के रूप में किया जायेगा। मार्क्स की योजना श्रमजीवियों को पूँजीवाद के शोषण से बचाकर श्रम मूल्य बढाने की थी और मार्क्स के बाद मार्क्सवाद बुद्धिजीवियों का नेतृत्व संभालकर तथा पूँजीवाद से समझौता कर श्रम शोषण कर बैठा। पूरे विश्व में मार्क्सवाद कितना ही अच्छा हो किन्तु भारत मं उसने आज तक श्रम के समर्थन मे शब्दजाल के अतिरिक्त कुछ नही किया। क्योकि मार्क्सवाद अच्छी तरह जानता है कि श्रम मूल्य वृद्धि देश और समाज में असंतोष को घटा देगी। और असंतोष घटते जाना उसकी सत्ता से और दूरी बढाता जायेगा क्योकि बेरोजगारी, श्रम शोषण, अन्याय और अत्याचारों का चरम उत्कर्ष साम्यवाद की सफलता का सर्वश्रेष्ठ अवसर होता है।

मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि समाज में जब तक बेरोजगारी समाप्त या नियंत्रित नहीं होगी तब तक विकास की सारी बातें बेमानी हैं। श्रम को उचित सम्मान, महत्व और मूल्य समाज मे न्यायपूर्ण व्यवस्था की अनिवार्य शर्त है। भारत में श्रमजीवियों की संख्या आधे से अधिक है और बुद्धिजीवियों और पूंजीवादियों दोनो की संख्या मिलाकर भी आधे से बहुत कम है। श्रम को उसकी न्यूनतम आवश्यकता के अनुसार मूल्य और समाज के न्यूनतम साझेदार के रूप में सम्मान मिलना हीं चाहिए। श्रमजीवियों को बुद्धिजीवियों और पूँजीवादियों की सुविधा और सम्मान के औजार के रूप में मानने की अब तक की जो परम्परा रही है वह समाज में कभी शान्ति स्थापित नहीं होन देगी। मेरा तो यह मत है कि देश के विकास में सीमेंट, लोहा, बिजली आदि की सुख सुविधा के साधनों की उपलब्धता के आधार पर आंकलन करने की विदेशो परिपाटी को छोड़कर श्रम मूल्य वृद्धि के

साथ जोड़ दिया जावे और तब देखा जाये की भारत की प्रगति का स्तर क्या है। श्रम मूल्य वृद्धि के प्रयत्नों को हमें एक अभियान के रूप में स्वीकार करना आज की एक बडी मानवीय आवश्यकता है।

श्रम मूल्य वृद्धि का एक ही मार्ग है श्रम की मॉग बढ़े और यदि श्रम की मांग बढ़ेगी तो मूल्य भी बढ़ेगा और श्रम का सम्मान भी बढ़ेगा। यदि श्रम का मूल्य महत्व और सम्मान बढ़ेगा तो उसका सवार्धिक लाभ आदिवासियों, दलितों और ग्रामीणों को हीं मिलेगा। आपको ना आरक्षण की आवश्यकता है न ही ग्रामीण रोजगार की चिन्ता भी क्योकि बेरोजगारी श्रम की मांग में कमी का परिणाम होती है। और समाज में बढ़ने वाले असंतोष की वजह। आप श्रम की मांग बढ़ने नही देते परिणाम स्वरूप समाज मे बेरोजगारी बढ़ती है और उसके कारण असंतोष बढ़ने के अवसर पैदा होते है। ऐसे असंतोष की उत्पत्ति को रोकने के लिए आप बेरोजगारा, श्रमजीवियों, दलितों और आदिवासियों के चार पांच प्रतिशत बुद्धिजीवियों को अपनी ओर मिलाकर आरक्षण, कृत्रिम उर्जा मूल्य नियंत्रण, शिक्षित बेरोजगारी तथा न्यूनतम श्रम मूल्य वृद्धि आदि का नाटक करते है। किन्तु यह नाटक लम्बे समय तक चलेगा नहीं। अब सच्चाई पर से पर्दा हटगा और श्रमजीवी समझेगा कि उसकी समस्याओं का वास्तविक समाधान कब और कैसे संभव होगा।

व्यवस्था और परिवार

बहुत प्राचीन काल से परिवार व्यवस्था की प्रथम इकाई है। चाहे मुस्लिम शासन काल रहा हो या उसके पूर्व का काल, परिवार व्यवस्था समाज व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग रही है। मुस्लिम शासन काल के बाद भी परिवार व्यवस्था तो कायम रही भले ही उसके स्वरूप में कुछ गिरावट आनी शुरू हुई। स्वतंत्र भारत में परिवार व्यवस्था छिन्न–भिन्न हुई परिवार व्यवस्था को नकारकर व्यक्ति को व्यवस्था की सीधी इकाई मानने की संवैधानिक व्यवस्था की गई। समाज व्यवस्था में तो परिवार व्यवस्था का प्रचलन रहा किन्तु संवैधानिक व्यवस्था में परिवार प्रणाली को पूरी तरह से नकार देने से यह व्यवस्था कमजोर होने लगी, टूटने लगी। वर्तमान समय में परिवार की न कोई स्पष्ट परिभाषा है, न ही मान्यता और न ही व्यवस्था से समन्वय। परिवार व्यवस्था एक टूट रही प्रणाली के अवशेष के रूप में जीवित है।

परिवार की वर्तमान परिभाषा में मुख्य रूप से पति, पत्नी और बच्चे ही माने जाते हैं यदि वद्ध माता–पिता भी जीक्ति हों तो वे भी परिवार के सदस्य माने जाते है। यदि किसी परिवार के संचालक या मुखिया का संबंध परिवार के किसी सदस्य से भाई का हो तो वह संयुक्त परिवार माना जाता है। अब तक भारत में यही मान्यता है।

परिवार की सम्पत्ति का मामला बहुत ही अस्पष्ट, बेतरतीब तथा विवादास्पद है। भाईयो का हिस्सा बराबर होगा। माता पिता का क्या होगा, पति पत्नी का क्या होगा, लड़कियों का विवाह पूर्व और विवाह पश्चात सम्पत्ति में कैसा हिस्सा होगा तथा परिवार में रहते हुए व्यक्तिगत सम्पत्ति पृथक रखने का अधिकार जैसे मामले में समाज की मान्यताएॅ तथा कानून बिल्कुल पृथक–पृथक है। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच तो सम्पत्ति के अधिकार की पृथक–पृथक धारणाएॅ हैं ही, हिन्दुओं मे भी बंगाल, बिहार, यूपी के आधार पर पृथक–पृथक कानून बनाकर इस व्यवस्था को और ही जटिल बना दिया गया है। भारतीय न्यायालयों में इस सम्पत्ति संबंधी पारिवारिक विवादों में मुकदमों की संख्या इस जटिल प्रणाली का प्रमाण है। परिवार की सम्पत्ति संबंधी जटिल कानूनी और सामाजिक अवधारणाओं और उनके बीच स्थापित विरोधाभासों ने परिवार की टूटन की पृष्ठभूमि बनाने में बहुत सहायता की है।

व्यक्ति और समाज के बीच व्यवस्था की अनेक इकाइयों की आवश्यकता थी। व्यक्ति और समाज के बीच परिवार, गॉव, जिला, प्रदेश, राष्ट जैसी व्यवस्था की इकाईयॉ यदि बनी होतीं तां सब कुछ व्यवस्थित चल सकता था। किन्तु ऐसी को इकाई बन नहीं सकी क्योकि बीच में राष्ट रूपी इकाई ने स्वयं को समाज ;विश्व से स्वतंत्र इकाई घोषित कर दिया, दूसरी ओर राष्ट रूपी इकाई ने प्रदेश से नीचे किसी इकाई को मान्यता ही नहीं दी। भारतीय संविधान ने राष्ट को राज्यों का संघ घोषित कर दिय। इस व्यवस्था में व्यक्ति को मूल अधिकार प्रदान करके राज्य और राष्ट के बीच सारे अधिकार आर दायित्व बांट लिए गये। परिवार शब्द को तो छुआ ही नहीं गया, गॉव और जिला को भी प्रदेश व्यवस्था के अधीन कर दिया गया। परिणाम जो होना था वह हुआ। पूरी तरह अव्यवस्था हुई। आम लोगों के चरित्र में गिरावट आई। व्यवस्था की रेल पटरी से उतर गई। प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत सोच में इतना अधिक परिवर्तन आया कि वह सोच न्याय से हटकर अपनत्व की ओर जाने लगी, और सामाजिकता से हटकर स्वार्थ भाव में परिवर्तित होने लगी। परिवार व्यवस्था व्यक्ति को सामूहिक अनुशासन और उत्तरदायित्व की टनिंग देने वाली पहली इकाई है। दूसरी इकाई गॉव है। किन्तु इन सबको किनारे करके सामूहिक अनुशासन और उत्तरदायित्व की टनिंग देने का काम सीधे सरकार ने उठा लिया और वह न अनुशासन कर सकी न सामूहिक उत्तर दायित्व। व्यक्ति के कर्तव्य भाव को भी इस सीधी व्यवस्था ने बहुत नुकसान किया। परिणाम स्वरूप सारे भारत म कर्तव्य की जगह अधिकार और अनुशासन के स्थान पर उच्श्रृखलता और स्वार्थ भाव बढ़ता गया और बढ़ता जा रहा है।

आज भारत में ऐसे लोगो की बाढ़ सी आई हुई है जो वर्तमान सारी समस्याओं का कारण चरित्र पतन को मानते है। इनमें अनेक लोग तो बहुत अच्छे विद्वान, समाजशास्त्री, कानूनविद या न्यायविद भी है। मै यह नही कह सकता कि ये लोग ऐसे तर्क भूल से देते है या जानबूझकर। इनसे कोई यह नहीं पूछता कि चरित्र पतन का कारण क्या है और समाधान क्या है। ये लोग चरित्र पतन को सारा दोष देकर अपनी जवाबदेही से मुक्ति पा जाते हैं, जबकि सच्चाई यह है कि चरित्र पतन का कारण नहीं बल्कि अव्यवस्था का परिणाम हैं जो भारत में परिवार और गांव को पृथक करके सीधी संवैधानिक व्यवस्था के कारण पैदा हुई है। ये सब विद्वान बड़ी मासूमियत स कहते है कि जब तक चरित्रवान लोग चुनकर नही जायेगें तब तक चरित्र नही सुधरेंगा और जब तक चरित्र नही सुधरेगा तब तक व्यवस्था नहीं सुधरेगी। ये इसका उत्तर नहीं देते कि जब सम्पूर्ण समाज में चरित्र की गिरावट है तो ऐसी स्थिति मे चरित्रवान कैसे उपर जाएगा और कौन उपर पहुचायेगा। ये यह प्रश्न भी टाल जाते है कि सैंतालिस में जब आज की अपेक्षा कई गुना अधिक चरित्रवान लोग सत्ता में थे तब चरित्र की गिरावट क्यों हुई या देश अव्यवस्था की ओर क्यों गया। चरित्र पतन का कारण दोषपूर्ण नीतियॉ थी जो उन चरित्रवानों में सामाजिक ज्ञान का अभाव और राजनैतिक ज्ञान का आधिक्य की नीतियों के कारण है। मौलिक नीतियों के आधार पर व्यवस्था का ढॉचा बनाना राजनीति शास्त्र का। हमारे राजनेताओं ने कभी इस संबंध में समाज"शास्त्रियों से परामर्श नहीं किया। राजनेताओं और वकीलों ने मिलकर व्यवस्था का एक ढ़ाचा बना लिया। यहॉ तक कि गांधी जी को भी इन्होनें इस ढ़ाचे से दूर रखा। यही कारण था कि व्यवस्था में न परिवार शामिल हो पाया न गांव। अब इन समस्याओं पर नये सिरे से विचार करके परिवार को व्यवस्था की पहली इकाई घोषित करना आवश्यक है।

परिवार का वर्तमान टूटा, अस्पष्ट स्वरूप न संवैधानिक स्वरूप ग्रहण कर सकेगा न ही समाधान कर सकेगा। पश्चिम ने परिवार की परिभाषा पति पत्नी और बच्चे की मान्य की। चीन ने परिवार शब्द को हटाकर कम्यून शब्द स्थापित किया और सम्पत्ति को भी कम्यून ने मान्य किया। गांधीजी ने सांसारिक जीवन में पति पत्नी और बच्चें, आपराधिक कार्य में व्यक्ति और सम्पत्ति के मामलें में गांव को इकाई माना। मेरे विचार में एक पृथक परिभाषा की आवश्यकता है (संयुक्त सम्पत्ति और संयुक्त उत्तरदायित्व के आधार पर एक साथ रहने हेतु सहमत व्यक्तियों का समूह) इस परिभाषा में बिना रक्त संबंध के लोग भी दोनो की सहमति से परिवार के सदस्य बन सकते हैं अर्थात परिवार गठन में रिश्ते अनिवार्य नहीं होंगे। इसी तरह नई परिभाषा में सम्पत्ति न व्यतिगत होगी न ही गांव की बल्कि वह सम्पूर्ण परिवार की संयुक्त होंगी। कोई व्यक्ति परिवार का सदस्य रहते हुए पृथक सम्पति न रख सकेगा न उपयोग कर सकेगा। तीसरी बात यह होगी कि परिवार के प्रत्येक सदस्य के कार्यो का उत्तरदायित्व सामूहिक होगा। जैसा कि अभी मंत्रिमंडल का सामूहिक उत्तरदायित्व होता है। यदि परिवार का कोई सदस्य अच्छा या बुरा करता है तो उससे प्रा परिवार प्रभावित होगा अन्यथा आप उस सदस्य को परिवार से बाहर कर दें। इस मूल सिद्धान्त पर परिवार का संवैधानिक ढांचा खडा़ हो सकता है।

हमें व्यवस्था के ठीक–ठीक संचालन के लिये परिवार व्यवस्था को खड़ा करना ही होगा। मैंने एक सुझाव दिया है। इस सुझाव पर एक बहस छेड़कर एक संशाधित स्वरूप बनाया जा सकता है। इस सुझाव पर अनेक शंकाएँ और प्रश्न खड़े हो भी सकतें है आर किये भी जा सकते है। ऐसे प्रश्न और शंकाओं का हम स्वागत करेंगे। किन्तु यदि ऐसे प्रश्नों के साथ कोई सुझाव भी जुड़े हो तो हमें इस विचार मंथन को आगे बढ़ाने में बहुत सुविधा होगी। किसी प्रचलित व्यवस्था में यदि कोई मूलभूत परिवर्तन का सुझाव आता है तो प्रश्न आते ही हैं और आने भी चाहिये। सतर्कता बहुत ही आवश्यक है। किन्तु जब हम अंतिम रूप से तय कर चुके हैं कि व्यवस्था में परिवार की भागीदारी होने चाहिए तो आपके प्रश्न उक्त वर्तमान व्यवस्था के स्थान पर परिवार व्यवस्था के प्रश्न में सकारात्मक होने चाहिये, नकरात्मक नहीं।

वर्तमान व्यवस्था पूरी तरह असफल सिद्ध हो चुकी है। अब यह व्यवस्था छोटे मोटे सुधारों से ठीक नहीं हो सकती। इसमें मौलिक परिवर्तन करने होंगे। व्यक्तिगत सम्पत्ति और स्वार्थ अपराध वृद्धि में सहायक हो रहे है। अपराध नियंत्रण हेतु तात्कालिक प्रयासों के साथ–साथ दीर्घकालिक प्रयास भी करना आवश्यक है। व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार को संशोधित करके पारिवारिक सम्पत्ति के रूप में प्रावधान करने से सोंच में अंतर आयेगा ही। साथ ही यदि अपराधों के संबंध में व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के स्थान पर सामूहिक उत्तरदायित्व का कानून बने तो कुछ सुधार अवश्य ही होगा। गांधी ने गांव की सम्पत्ति का सुझाव दिया था। वह सुझाव व्यवहारिक था या अव्यवहारिक इस विवाद में मैं नही पड़ना चाहता। मैं तो सिर्फ सही कह सकता हूँ कि उक्त प्रस्ताव का लेश मात्र भी लागू नहीं हुआ। हम अब उक्त प्रस्ताव की एक कड़ी के रूप में उसे पारिवारिक मानने की बहस शुरू कर रहे है।

उत्तरार्ध

व्यवस्था परिवर्तन अभियान यात्रा

पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार श्री बजरंगलाल एवं श्री आचार्य पंकज देश के विभिन्न प्रदेशों में सभाओं– सम्मेलनों के माध्यम से चार सूत्रीय संविधान संशोधन हेतु समर्थन जुटाने का सार्थक पयास कर रहे है। छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पं. बंगाल, झारखण्ड, बिहार, उत्तर प्रदेश, उत्तरॉचल, हिमांचल, पंजाब, हरियाणा के सफल कार्यक्रमों में आयोजकों व समर्थकों में भारी उत्साह बताया गया है। आयोजकों द्वारा निरन्तर पत्र और प्रकाशित समाचार पत्रों की कटिंग तत्व में भी प्रकाशित किया जा रहा है।

देश में बढ़ती अराजकता, भ्रष्टाचार, सामाजिक विघटन (साम्प्रदायिकता एवं जातीय विद्वेश), आतंकवाद (नक्सली हिंसा– माफियावाद), बलात्कार, आर्थिक असमानता– श्रम शोषण इत्यादि से पीड़ित भारतीय समाज को मुक्ति दिलाने तथा भयमुक्त वातावरण में अहिंसक क्रांतिपरक परिवर्तना से भारतीय समाज को सुदृढ़– शक्तिशाली बनाने क लिये समाज के सभी वर्गो की सक्रिय भागीदारी व्यवस्था परिवर्तन अभियान में आवश्यक हैं। अस्तु व्यवस्था परिवर्तन अभियान के कार्यक्रमों में समान विचार के लोगों के साथ सक्रिय रूप से भाग लेकर व्यवस्था परिवर्तन अभियान को एक सफल आन्दोलन की ओर ले जाने की पृष्ठभूमि तैयार करने में ज्ञान तत्व के पाठकों का सहयोग अपेक्षित है।

ज्ञातव्य है कि लोक नियुक्त तंत्र को लोक नियन्त्रित तंत्र बनाने के अहिंसक अदभुत प्रयास चार सूत्रीय संविधान संशोधन, 1. चुने हुए प्रतिनिधियों कों वापस बुलाने का अधिकार, 2. संविधान सूची में विस्तार कर परिवार, ग्राम, जिला को सूची में जोड़ने, 3. संविधान में उल्लखित नीति– निर्देशक तत्वों को बाध्यकारी बनाने, 4. विदेशी समझौतों की संसद में पुष्टि कराने की मांग को लेकर राष्ट्रव्यापी बहस और समर्थन जुटाने के उद्देश्य से उक्त ऐतिहासिक यात्रा 2 अक्टूबर को दिल्ली में समाप्त होगी।

लोकमान्य तिलक एवं राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की स्मृति से जुड़ी इस व्यवस्था परिवर्तन यात्रा का समापन गांधी समाधि राजघाट दिल्ली में 2 अक्टूबर 2006 को होगा।

व्यवस्था अभियान यात्रा से सम्बन्धित समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार :–

नवभारत – रायपुर। 23 जुलाई 2006
सायकिल पर कर व कुकिंग गस में छूट से व्यवस्था नहीं सुधरेगी।

रायपुर : व्यवस्था परिवर्तन अभियान के संयोजक बजरंगलाल अग्रवाल का मानना है कि रसोई गैस मे छूट देकर सायकिल में टैक्स बढ़ाने एवं खली में टैक्स लगाकर ट्रैक्टर में छूट देने से गरीबी दूर नहीं होगी उन्होने कहा कि देश की व्यवस्था तभी सुधरेगी जब नेता नैतिक हो जायं एवं टैक्स नीति व कानून में संशोधन हो, संविधान के लिये देश के 1500 लोग एक माह तक बैठक कर सुझाव देगे।

श्री अग्रवाल ने आज दोपहर प्रेस क्लब के रूबरू कार्यक्रम में कहा कि रामानुजगंज में व्यवहारिक प्रयोग एवं पंद्रह वर्षो के सतत शोध के बाद यह निष्कर्ष निकला है कि राष्ट्र का विकास तीव्र गति से हुआ ता समाज उससे भी ज्यादा गति से पीछे चला गया। सड़क, शिक्षा, स्वास्थ्य के मामले में भारत का विकास हुआ है लेकिन चोरी, डकैती, बलात्कार, जालसाजी, मिलावट, हिंसा–आतंक, भ्रष्टाचार, चरित्र में गिरावट, साम्प्रदायिकता, जातीयता, श्रम शोषण आर्थिक असमानता प्रायः सभी राज्यों में है। जिसका कोई समाधान राजनीतिक दलों के पास नहो है। उन्होने कहा कि राज्य को सबसे ज्यादा भय समाज से होता है इसलिय उसने समाज को जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, गरीब, अमीर, उत्पादक, उपभोक्ता के नाम से बांटकर तोड़ने का प्रयास किया। यही वजह है कि मंदिर व प्याज के मामले पर आम चुनाव में हार जीत होते है। राज्य ने अधिक से अधिक कानून बनाकर अपराध भाव जागृत किया एवं अमीरी व गरीबी की खाई को चौड़ा किया, जिसका ज्यादा उपयोग होता है उस पर ज्यादा टैक्स जिसका कम उपयोग होता है उस पर टैक्स में रियायत। गाय–बैल के खाने वाली खली व सायकिल पर टैक्स लगाना एवं ट्रैक्टर व घरेलू कुकिंग गैस में छूट देना इसका परिचायक है। उन्होने कहा कि उपरोक्त 11 समस्याओं के निदान के लिये भारतीय संविधान में चार संशोधन ही पर्याप्त है जिसमें चुने हुए जनप्रतिनिधियों की वापसी, केन्द्र सरकार के दायित्व को न्यायालय में चुनौति देने का अधिकार एवं विदेशी समझौतों को संसद में रखना अनिवार्य किया जाना चाहिये।

लोकमत – जलगांव, मंगलवार, दिनॉक– 1 अगस्त 2006।

लोकनियुक्त नको लोकनियंत्रित भासन असावे

ग्रामसुधार समितीच्या सभेट बजरंगलाल अग्रवाल यांचे आवाहन जलगांव. दि. 31 ग्राम स्वराज्याच्या निर्मितीसाठी लोकनियुक्त शासन नको तर लोकनियंत्रित शासन असावे अशी मागणी व्यवस्था परिवर्तन अभियानाचे मुख्य प्रवर्तक व छत्तीसगढ़ राज्यातील रामानुजयेथील बजरंगलाल अग्रवाल यानी सोमवारी येतलेल्या पत्रकार पढेत केली,

दरम्यान, जिल्हा ग्रामसुधार समितीची सभा कांग्रेस भवनात त्यांच्या उपस्थितीत झाली धवेली, यात्रेली स्वातंत्रय सैनिक काकासाहेब लेले अध्यक्षस्थानी होते, जिल्हा सर्वोदय समाजाचे अध्यक्ष माधवराव राणे नं.जौ. काबरा, भांतीलाल रायसोनी, ॲड. लाठी, ज्येश्ठ पत्रकार भांतावाणी, वक्का इंगले आदी उपस्थित होते, व्यवस्था परिवर्तन अभियानाबाबत बोलतांना त्यांनी राष्ट्रसमोरील चोरी, बलात्कार, फसवणुक, भेसक आतंकवाद, भ्रष्टाचार,

चारित्रहनन, साम्प्रदायिकता, जातिय तणाव, आर्थिक असमानता, श्रम"शोषण या प्रमुख 11 समस्यांबाबत माहिती दिली। समस्यावर उपाय शोधण्यापेक्षा राजकिय नेत्यांनी स्वतःला मजबूततर समाजाला कमजोर करण्याचे कार्य केले असल्याचे त्यांनी म्हटले।

न्याबेली व्यवस्थापन परिवर्तन अभियानाचु केन्द्रीय संचालन समितीचे पंकज वाराणसी यांचे भाषण झाले। त्याग त्यांगी राजकारण का समाजातील परस्परातील संबधांची व्याख्या स्पष्ट करण्याची आवश्यकता निर्माणझाली असल्याचे म्हटले। श्रमजीवी व्यक्तींमधील बाढती निराशा दशहत, आणि हिंसेच्या मार्गाने वाटचाल, सुरू आहे। अग्रवाल यांच्या सर्वव्यापी मोहिमेस प्रतिसाद देण्याबाबत सामान्य नागरिकांना आवाहन केले। अभार भरत पाटील यानी मानले।

दै. विश्वसमाचार, सोलापुर, दिनांक – 2 अगस्त 2006।

अखिल भारत व्यवस्था परिवर्तन अभियान यात्रा आज सोलापूरात

सोलापुर, दि. :– आपल्या देशातील सध्याची घटना, पूर्वीच्या इंग्रज भासनाच्या घटनेचा संदर्भ घेउंनच करण्यात आली असून, ती गरोब व श्रमजीवी यांचे शोषण करण्याच्या उददेशाने, समाजकंटक, भांडवलदार व बुद्धजिवी यांचे 'षडयंत्र आहे या देशाच्या समस्या निवारणासाठी स्वातंल्यात्तर 50 वर्शानंतरही ही घटना निष्फलक ठरली आहे. त्यामुके घटनेत संषोधन आवश्यक असून हे संषोधन झाल्यास समस्यांचे आपोआपच निराकरण होईल हे संशोधन घडवून आणण्यासाठी दे"ाभर जनजागृती व्हांवी याउददेशाने व्यवस्था परिवर्तन अभियान यात्राचे आयोजन करव्यात आला असून ही यात्रा, आज 2 आगूस्ट 2006 ला सोलापूरात येत आहे, व्यवस्था परिवर्तन अभियानाचे संस्थापक बजरंगलाल अग्रवाल व त्यांचे सहकारी आचार्य पंकज, विनीतजी हे यात्रा समवेत असून, बुधवारी सायं. 7 वाजता डाकबंगल्यात सोलापूरातील स्वयंसेवी संस्था समाजसेवक व नागरिकांशी संवाद साधणार आहेत, तसेच ज्यांना या अभियानात सहभागी व्हावयाचे ओ, त्यांच्याकडून संकल्पपत्रे भरून घण्या येणार आहेत आणि जिल्हा भाखा स्थापनेबाबत विचार विनिमय कणार आहेत अशी माहिती या यात्रेचे स्थानिक संयोजक भयामसुंदर तिवाडी व चंदूभाई देढिया यांनी पत्रकार परिषदेत दिल्ली, या पत्रकार परिषदेला ज्येश्ठ समाजसेवक वसंतराव आपटे, विद्याधर दोशी, महादेव न्हावकर ह उपस्थित होते.

निवडून दिलेल्या लोकप्रतिनिधीला परत ब्रोलाविण्याचा अधिकार, केन्द्र व राज्य सरकारच्या अधिकारांच्या सूची प्रमाणेच, परिवार, गांव व जिल्हांच्या अधिकान्यांच्या सूचीचा घटनेत समावेष करणे, घटनेतील निती निर्देशक तत्वे ऐच्छिक न ठेवता ती बंधनकारक करावीत आणि कोणताही आंतरराष्ट्रीय करार करताना संबंधित लोकसभा वा विधानसभेत तो मंजूर करून घेण, या चतुः सूत्रीवर अधारित हे संशोधन आहे. घटनेत संशोधन होण्यासाठो व्यवस्था परिवर्तन अभियान या राष्ट्र स्तरीय स्वयंसेवी संघटने चे संस्थापक बजरंगलाल अग्रवाल हे छत्तीसगढ़ राज्यातील सरगुजा जिल्हातील, रामानुजगंज या भाहरातील आहेत, वयाच्या 25 व्यावर्शी ते या भाहराचे नगराध्यक्ष होते व त्यांनी या भाहरात व्यवस्था परिवर्तनाचा यशस्वी प्रयत्न केला, व्यवस्था परिवर्तनाचा त्याच्या या प्रयोगाचा राष्ट्रभर विस्तार व्हावा म्हणून ते रामानुजगंज सोडून दिल्लीत स्थानी झाले आणीबाणीत 18 महिने कारावास भेगला. या अभियानासाठी पूर्णपणे स्वतः ला वाहून घेतले आहे. भारततातील विद्वानांचे संमेलन दिल्लीत घेउन, व्यवस्था परिवर्तनावर विचार मंथन होउन अभियानाची सीापना करण्यात आली, या मंथन व अभियानामध्ये महाराष्ट्रातील दिवंगत तुकारामदादा गीताचार्य यांचा सकीय सहभाग होता. सर्वोदयी प्राचार्य बंग यांचाही सहभाग होता व आहे. अभियानाचे राष्ट्रीय कार्यालय दिल्लीत स्थापन करण्यात आले.

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक यानी व्यवस्था परिवर्तनाचा सर्वप्रथम प्रयोग केला, याची जाणोव ठेवून या अखिल भारत यात्रेचा शुभारंभ 1 ऑगस्ट ला त्यांच्या स्मृतीदिनी, त्यांचीच कर्मभूमीपूणे यथून करण्यात आला आहे. ह महाराष्ट्रासाठी भूषणावह आहे. यात्रा कालावधी 100 दिवसांचा असून भारतीयल प्रमुख 17 राज्यातून या यात्रेचे भ्रमण होईल 2 ऑक्टोबर 2006 रोजी म. गांधी जयंती दिनी दिल्ली येथे गांधी समाधिवर यात्रेचा समारोप होईल. यावली दिल्लीला अखिल भारतीय भव्य मेकाव्याचे आयोजन करण्यात आले आहे.

बजरंगलाल अग्रवाल यांच्याशी संवादासाठी व या अभियानात सहभागी होण्यासाठी दूरध्वनी क. 9226398201, 9890029400 वर संपर्क साधण्याचे आवाहन संयोजकांनी केले आहे. बुधवारी सायं. 7 वा. डाकबंगल्यात सोलापूरातील स्वयंसवी संस्था, समाजसेवक व नागरिकांशी संवाद साधणार आहेत. त्याचा लाभ ध्यावा असे आवाहन करण्यात येत आहे.